आलेख

दर्द और रूमानियत को नई परिभाषा देने वाली अमृता प्रीतम

❑ डॉ० सत्यपाल श्रीवत्स

पंजाबी की प्रसिद्ध कवयित्री एवं लेखिका अमृता प्रीतम उन इने-गिने साहित्यकारों में एक थी जिसने अपनी मातृ भाषा में अपनी रचनाएं सृजित करके भारतीय साहित्यकारों में ही नहीं अपतु विश्वभर के साहित्यकारों में अपना विशिष्ट स्थान प्राप्त किया। इसके साथ-साथ इस लेखिका ने हिन्दी भाषा में भी उतने ही आत्मविश्वास से लिखकर उसके साहित्य की श्री वृद्धि करने में भी अपना अमूल्य योगदान दिया और प्रख्यात हिन्दी साहित्यकारों में अपना विशिष्ट स्थान बनाया। इनकी पंजाबी रचनाओं में जैसी सहजता, मौलिकता और अपने परिवेश की विविधताओं का प्रतिबिम्ब है, हिन्दी रचनाओं में भी उसी अनुपात के साथ है। इतना ही नहीं अमृता ने इन दोनों भाषाओं के शब्दों को अपनी मार्मिक संवेदना की नवीन परिभाषा से संवार कर सार्थकता प्रदान की है।

अमृता प्रीतम ने कविता, कहानी, उपन्यास, आत्मकथा, संस्मरण आदि सभी साहित्यिक विधाओं पर अपनी लेखनी का सफल प्रयोग करके अपनी प्रामाणिकता सिद्ध की।

वस्तुतः पाकिस्तान और भारत की सांझी मिट्टी के दर्द के एहसास का नाम ही अमृता प्रीतम है और नाम है रूमानियत, इश्क, दर्द, तीव्र संवेदनात्मक स्पंदन एवं भावुकता, सूफीज्म, मिस्टिसिज़्म, आध्यात्मिकता और रजनीशवाद का और फिर सबसे बढ़कर अमृता प्रीतम नाम है सामाजिक वर्जनाओं के प्रति तीव्र विरोध का। अमृता प्रीतम केवल एक लेखिका का ही नाम नहीं बल्कि नाम है एक युग का, जो 31 अक्तूबर 2005 को सदा के लिए समाप्त हो गया। अद्भुत व्यक्तित्व था अमृता प्रीतम का जिसने लेखनी के सफल प्रयोग किए। यह भी एक अनोखी घटना है उनके जीवन की कि उस लेखिका ने अपनी लेखनी के इन प्रयोगों से पहले सफल फोटोग्राफी, नृत्य, सितारवादन, टेनिस आदि कलाओं के प्रति भी पूरे मनोयग के साथ अपने शौक पाल कर पूरे कर लिए थे।

पर जब लेखनी का शौक जागा तो शेष सभी शौक भुलाकर उसके प्रति इतनी शिद्दत के साथ समर्पित हो गई कि सदा के लिए उसी को तन-मन से समर्पित हो गई। इसीलिए अपनी आत्मकथा 'रसीदी टिकट' और पाकिस्तानी कवयित्री सारा शगुफ्ता को लक्ष्य करके अपने संस्मरणों में लिखती हैं-"जिंदगी के बहुत से दिन आए हैं, जब हाथ में थामें कलम

को गले से लगाकर रोई हूं-ईश्वर जैसा भरोसा तेरा न जाने कब और कौन किसी का यह बन जाता है।''......

यह कलम मेरे लिए सदा हाजिर -नाजिर खुदा के समान रहा है। इसे आंखों से देख सकती हूं, हाथों से छू सकती हूं और एक सूने कागज की तरह इसे गले लगा सकती हूं......

इसका और अपना रिश्ता अक्षर कविता में स्पष्ट करती हुई कहती हैं-

''फिर वही हवा जिसने गोदी में खिलाया
और जिसने मेरी मां की मां को जाया।
कहीं से दौड़ कर आई
मौन हाथों में कुछ अक्षर ले आई
इन्हें काली लकीरें न समझना
ये लकीरों के गुच्छे तेरी आग के साथी....
और इस तरह कहते-कहते वह बढ़ गई आगे।
तेरी आग की उम्र इन अक्षरों को लग जाए।''

''देखा जिन्दगी के हर उतार-चढ़ाव के समय जो मेरे साथ रही थी वह मेरी लेखनी थी। चाहे कोई घटना मुझ अकेली पर घटती, चाहे देश के विभाजन जैसा कोई कांड लाखों लोगों के साथ हो जाता, यह लेखनी मेरे अंगों के समान मेरा एक अंग बनकर रहती थी। सो, केवल यही जिन्दगी का फैसला था। अन्य सब शौक खाद बनकर इसके रंगों-रेशों में समा गया।''

डॉ० कीर्ति केसर का यह कहना सर्वथा उचित है-उसकी कविता का प्रस्फुटन कोमल प्रेमभावों से हुआ था। प्रेम का उसके पास एक पूरा दर्शन था प्रेम की सुखद और दुखद अनुभूतियां उसकी पहले दौर की कविताओं में प्रकट हुई हैं। जब उसने कवि के रूप में लिखना शुरू किया उस समय उत्तर भारत के साहित्य पर छायावादी-रहस्यवादी युग की प्रवृतियां दुखवाद, पीड़ावाद, पलायनवाद और रोमांटिक सुख के रूप में कविता में प्रकट हो रहे थे। परन्तु पंजाबी की बहिर्मुखी जीवन शैली में इसके लिए कोई स्थान नहीं था।[1]

अमृता प्रीतम का जन्म गुजरांवाला (अब पाकिस्तान में) 31 अगस्त 1919 ई० में हुआ था। इसके माता-पिता ने अपनी होनहार बच्ची का नाम रखा था 'अमृत कौर'। बहुत ही सुन्दर थी-'अमृता' गुजरांवाला में ही उसका बचपन बीता और प्रारम्भिक शिक्षा भी वहीं पर ग्रहण की और उच्चशिक्षा लाहौर में सम्पन्न की। तब उसके यौवन ने भी अंगड़ाई ली। समयोपरान्त वहीं पर अमृत कौर अमृता प्रीतम नाम से प्रसिद्ध हो गई। इसका कारण था अमृता कौर का विवाह सरदार प्रीतम सिंह के साथ होना। वह उस समय लाहौर के अनार कली बाजार में अपनी दुकान चलाया करते थे। परन्तु भाग्य की विडंबना यह हुई कि उस दम्पति का वैवाहिक जीवन कुछ वर्षों तक ही चल पाया और ये सदा के लिए अलग हो गए। परन्तु विलक्षण

बात यह कि सरदार प्रीतम सिंह अमृता के जीवानान्त तक प्रशंसक ही बने रहे। उनके वैवाहिक सम्बन्ध टूटने के पीछे अमृता के निरंकुश और स्वतन्त्र विचार, विभिन्न कलाओं के प्रति विशेषतया लेखन के प्रति समर्पण भाव इत्यादि थे। इस लिए जब उसने समझा कि वैवाहिक जीवन उस सब के लिए एक तीव्र बाधा है तो उसने पूर्ण स्वतन्त्र होकर ही अपने कला और लेखन प्रेम में तन्मय हो जाना ठीक समझा। सबसे पहले अमृता को फोटोग्राफी का शौक उत्पन्न हुआ।

उस समय वह अभी कौमारावस्था से ही गुजर रही थी। उसके पिता ने अपनी लाड़ली बेटी के लिए अपने घर के एक कमरे में ही डार्क रूम आदि की सुविधाएं जुटा दीं। वह अपनी आत्मकथा में लिखती है– "नेगेटिव से पॉजिटिव बनाते समय खाली कागजों पर उभरते चमकते चेहरे एक संसार रचने के समान लगते थे। कुछ अरसे तक इस शौक ने मन को पकड़े रखा, फिर नृत्य की ओर आकर्षण हुआ। लाहौर में तारा चौधरी से कोई छह-आठ महीने नृत्य सीखा, पर जब तारा ने स्टेज पर अपने साथ काम करने को कहा तो घर से अनुमति नहीं मिली। शौक मुरझा गया और सूखे पत्ते की तरह जमीन पर गिरते ही एक नए बीज के रूप में अंकुरित हुआ, सितार वादन का शौक। हिन्दुस्तान विभाजन के समय तक यह शौक बहुत खिले रूप में था। लाहौर रेडियो स्टेशन में कई बार सितार बजाया। मास्टर रामरखा, सिराज अहमद और फीना सितारिया मेरे उस्ताद थे। इसके साथ साथ टेनिस खेलने की भी ललक थी। लाहौर के लारेंस गार्डन के पीछे की तरफ के लॉन पर रोज जाकर टेनिस सीखती थी, पर देश का विभाजन होते ही ये सब शौक मेरे लिए अजनबी हो गए। इनके लिए जैसी फुरसत जैसी सहूलियतों की आवश्यकता थी, उनके लिए जीवन में कोई स्थान नहीं रह गया इसलिए ये शौक बेगाने हो गए।"

1957 ई० की जीवन में इमरोज (इन्द्रजीत)एक संवेदनशील संबल बनकर आया। इमरोज अमृता से छोटा था। उन दिनों वह अमृता के उपन्यास 'डाक्टर देव' पर वृत्त चित्र बना रहा था। सम्पर्क में आने के बाद दोनों साहित्यिक पत्रिका नागमणि (मासिक)चलाने लगे जो तीन वर्ष तक चलने के बाद बन्द करनी पड़ी। इस पत्रिका द्वारा उन दोनों ने युवा वर्ग को पर्याप्त प्रोत्साहित किया था। उन दिनों अमृता आकाशवाणी, दिल्ली में काम कर रही थी। यह काम उसे एम.एस. रंधावा की सहायता से प्राप्त हुआ। कुछ समय बाद वहां से उसने त्याग पत्र दे दिया था। ध्यातव्य है कि इमरोज ने अमृता का साथ उसकी अन्तिम सांस तक निभाया। उसकी लगभग दो वर्षों तक गम्भीर बीमारी की अवस्था में इमरोज ने पूरे समर्पण भाव से उसकी सेवा की। इमरोज जैसा समर्पित मित्र पाकर अपने आपको धन्य समझती थीं।

पंजाबी की प्रसिद्ध लेखिका अजीत कौर का कहा है "जब वह अभी तीन वर्ष की नन्ही बालिका थी तो अमृता जी के सम्पर्क में आ गई थी। तभी से उनके विलक्षण व्यक्तित्व से मैं प्रभावित थी।" वह आगे चलकर कहती हैं "जब मैं कुछ बड़ी हुई तो देखा कि अमृता जी उन दिनों पंजाबी की प्रसिद्ध पत्रिका 'पंज दरिया' के कार्यालय में जाया करती थीं। पत्रिका

के सम्पादक सरदार सोहन सिंह क्योंकि स्वयं भी पंजाबी के प्रसिद्ध साहित्यकार थे, अत: उनके कार्यालय में बलवन्त गार्गी, मंटो, अमृता प्रीतम आदि साहित्यकारों का निरन्तर आकर बैठना और साहित्यिक चर्चा करना स्वाभाविक था।''

अमृता के व्यक्तित्व की यह सबसे बड़ी विशेषता थी कि वह जात-पात के झमेलों और मज़हबी भेद-भाव से सर्वथा ऊपर थीं, क्योंकि जब वह अभी अपने बचपन के दिन गुजार रही थीं तब महात्मा गांधी जी द्वारा चलाए जा रहे स्वतन्त्रता आन्दोलन अपने जोरों पर थे। स्वाभाविक था कि उनका संवेदनशील हृदय वाली अमृता पर प्रभाव भरसक पड़ता। यही कारण था कि उनमें साम्प्रदायिक सद्भाव के संस्कार बड़ी तेजी से पनपने प्रारम्भ हो गए थे, जिनकी जड़ें धीरे-धीरे उनके हृदय पटल पर स्थायी रूप धारण कर गईं।

अजीत कौर के अनुसार अमृता प्रीतम में अद्भुत संवेदनशीलता थी, उनका पंजाबी और हिन्दी दोनों भाषाओं पर समान अधिकार था। प्रसंगानुसार शब्द चयन और संयोजन की उनमें अभूतपूर्व क्षमता थी उनकी कविताओं का केन्द्रीयभाव मुख्यतया रोमांस और भावुकता हैं। इस बारे में उन्होंने अपनी आत्मकथा रसीदी टिकट में जो अनेक घटनाएं दर्ज की हैं उन में से एक यहां उद्धृत की जाती है- ''इस तरह हफ्ते गुजर जाते, महीने गुजर जाते, कोई समागम होता तो मैं साहिर (साहिर लुध्यानवी)की आवाज़ सुन सकती थी और जब कभी वो आ जाता मेरी काली रातें भी सपनों के पैरों तले चांदनी बिछा देती।'' (पृ 19)

1947 ई० में भारत विभाजन की भयंकर त्रासदी से अमृता को जो असह्य पीड़ा हुई थी उस से उसका संवेदनशील हृदय चीत्कार कर उठा था। उस समय उसने वारिसशाह को संबोधन कर जो यह कविता रची थी वह हर पाठक का दिल हिला देने वाली है-

अज्ज आखाँ वारिसशाह नूं किते कवरां बिच्चों बोल,
ते अज्ज किताबें इश्कदा कोई अगला बरका खोल।
इक्क रोई सी धी पंजाब दी, तू लिख-लिख मारे बैन,
अज्ज लक्ख धीयां रोन्दियां, तैनूं वारिस शाह नूं कहन।
उठ दर्द मंदां दिया दर्दिया, उठ तक अपणा पंजाब,
अज्ज बेल्ले लाशां विच्छियां ते लहू दी भरी चिनाब (वही पृ 24)

अर्थात्-आज मैं वारिस शाह से कहती हूं कि कहीं कबरों में से बोलो और इश्क की किताब का कोई अगला पृष्ट खोलो। पंजाब की जब एक बेटी रोई थी तो तुमने कई दास्तानें लिख डाली थीं। आज पंजाब की लाखों बेटियां रो-रोकर तुम वारिस शाह को ढूंढ-ढूंढ कर कह रही हैं-हे दर्द मंदों के साथ हमदर्दी करने वाले दोस्तो, उठो और अपने पंजाब को देखो। आज पंजाब के वनों और सड़कों पर हजारों लाशें बिखरी पड़ी हैं और चिनाब नदी भी उनके लहू से लाल होकर बह रही है।

लेखिका ने सच ही लिखा है, क्योंकि भारत के बंटवारे से अमृता को जो असह्य पीड़ा

हुई थी, उसे वह आजन्म नहीं भुला पाई थीं, उसकी तवारीख शीर्षक कवितायें उसके हृदय का दर्द किसी भी संवेदनशील पाठक का दिल झकझोर देने वाली हैं–

मैं नसीब जली–पंजाब की बेटी
मैं बोलकर क्या कहूंगी–
मेरी जुबान तो काट दी गई
हाथ भी बंध गए, पैर भी बंध गए
और माथे पर किस्मत–
काले नाग–सी बैठी हुई।
एक तूफान आया।
यह बदन बाकी है।
पर नसीब डूब गया[2]

अमृता प्रीतम को 1957 ई० में 'सुनहरे हरफ' कविता संग्रह पर साहित्य अकादमी का पुरस्कार प्राप्त हुआ था। 1981 ई० में उस कवयित्री को भारतीय ज्ञान पीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। उसके तुरन्त बाद अमृता प्रीतम को भारत सरकार ने पहले पद्म श्री और कुछ समय बाद पद्म विभूषण सम्मान से अलंकृत किया गया था। इसके अतिरिक्त इस सार्वभौम प्रतिभा की स्वामिनी को अन्य कई साहित्यिक एवं सामाजिक संस्थाओं ने भी समय–समय पर सम्मानित किया था। इस सुप्रसिद्ध कवियत्री लेखिका को कई विश्वविद्यालयों ने डी. लिट की सर्वोच्च मानद उपाधियों से विभूषित किया था। वह राजीव गांधी के प्रधान मंत्रीत्व के समय राज्यसभा की सदस्या भी मनोनीत की गई थीं। अमृता प्रीतम की रचनाओं की यद्यपि एक लम्बी सूची है तो भी उनमें से कुछ प्रसिद्ध एवं बहुचर्चित रचनाएं इस प्रकार हैं :–

कविता संग्रह–

1. धूप का टुकड़ा 2. कागज और कैनवास 3. सुनहरे हरफ 4. सुनेहड़े।

उपन्यास–

1. पांच बरस लंबी सड़क 2. पिंजर 3. अदालत 4. कोरे कागज 5. उनचास दिन 6. सागर और सीपियां 7. डाक्टर देव 8. हरदत्त का जिंदगी नामा 9. चकन छत्तीस 10. यात्री 11. आलना 12. एक थी अनीता 13. एरियल (लघु उपन्यास)

कहानी संग्रह–

1. कहानियां जो कहानियां नहीं हैं। 2. कहानियों के आंगन में 3. अंतिम पत्र 4. लाल मिर्च 5. दो खिड़कियां 6. एक शहर की मौत।

आत्म कथा–

1. रसीदी टिकट 2. अक्षरों के साये में।

संस्मरण-1. कच्चा आंगन 2. एक थी सारा।

इतनी उच्च कोटि की लेखिका होते हुए भी अमृता के जीवन के साथ एक बड़ी त्रासदी यह रही कि उन का साहित्य सदा आलोचकों के मध्य विवाद और आलोचना का विषय बना रहा। डॉ० रणवीर रांगा इस विषय में लिखते हैं "अमृता प्रीतम का जीवन और साहित्य दोनों लीक से हट कर हैं, दोनों में परम्परा का नकार और अपने सच को पाने की तड़प विद्यमान है। शायद इसीलिए दोनों ही जोखिम से भरपूर हैं और समाज की आंखों में किरकिरी भी बन गए हैं।[3]"

यही कारण है कि एक बार लेखिका ने बड़े दुखी मन से कहा था- 'मेरी सारी रचनाएं नाजायज़ संतान सी लगने लगी-मेरी सारी रचनाएं-क्या कविता और कहानी और क्या उपन्यास-मैं जानती हूं एक नाजायज़ बच्चे की तरह हैं। जानती हूं एक नाजायज़ बच्चे की किस्मत इनकी किस्मत है और इसे सारी उम्र अपने साहित्यिक समाज के माथे के बल भुगतने हैं। परन्तु यह सब होनें पर भी वह आत्मविश्वास के साथ लिखती हैं-

"मैं सारी जिन्दगी जो भी सोचती रही, लिखती रही, वह सब देवताओं को जगाने का प्रयत्न था, उन देवताओं को, जो इन्सान के भीतर सो गये हैं।[4]" लेखिका के इस कथन का निश्चय ही गहरा एवं प्रतीकात्मक अर्थ है। परन्तु जब कइयों ने लेखिका के इस कथन पर प्रतिक्रिया करते हुए पूछा-आपने तो देवताओं को जगाने की बात की, लेकिन उनकी जगह राक्षस जाग गये-अमृता प्रीतम ने इसके उत्तर में कहा- "मैंने तड़प कर कहा-लेकिन कोई राक्षस मेरे भीतर से तो नहीं जगा, मेरे भीतर से तो जब भी जगेंगे देवता ही जगेंगे। परन्तु जिन लोगों ने उनका और उनकी रचनाओं का निष्पक्ष रूप से मूल्यांकन किया है, वे तो उस अद्भुत कलम की धनी लेखिका को सम्मान ही देते हैं। प्रसिद्ध कहानीकार कमलेश्वर ने एक बार कहा था-"यह मेरी खुशनसीबी है कि मैं उस दौर में सांस ले रहा हूं, जिस दौर में अमृता प्रीतम हैं।[5]"

इसी प्रकार डॉ० मोहन जीत लिखते हैं-अमृता नाम उन कुछ नामों में हैं, जिन से भारत के रचनात्मक और चिन्तनशील साहित्य की सूरत बनती है। शायरी में कहें तो अमृता प्रीतम गहरे अक्षरों वाली वर्णमाला हैं। अमृता सिर्फ लेखिका ही नहीं, वह बहुआयामी शख्सियत हैं। वह इसलिए प्रमुख हैं कि वह एक संस्था हैं। अमृता केवल एक शायरा नहीं, गल्पकार, वार्ताकार, सम्पादिका, दार्शनिक व्याख्याकार, ज्ञानवेत्ता, चिंतक और प्रभावशाली व्यक्तित्व हैं। अमृता लोक मन में बसी हुई स्त्री-संवेदना का बिम्ब है[6]। अमृता अपनी आत्मकथा में लिखती हैं-जब 1975 ई० में उनके उपन्यास "धरती, सागर और सीपियां" की कथावस्तु के आधार 'कादम्बरी' फिल्म बन रही थी तो उसके डायरेक्टर ने उसे फिल्म का एक गीत लिखने को कहा था। संदर्भ था फिल्म की नायिका चेतना का अपने प्रिय से विचित्र मिलन कवियत्री का वह गीत असल में 1960 ई० में इमरोज के साथ अपनी पहली मुलाकात के समय रचे पंजाबी गीत का ही रूपान्तरण था। "वह लिखती हैं-मैं जब गीत लिखने लगी तो अचानक

वह गीत सामने आ गया, जो मैंने 1959 ई० में इमरोज से पहली बार मिलने पर अपने मन की दशा के बारे में लिखा था। जो दशा मैंने मन पर भोगी थी लगा, वही अब चेतना को भोगनी है और उस गीत से अच्छा कुछ और नहीं लिखा जा सकता। सो मैं अपने पंजाबी गीत को हिन्दी में अनुवाद करने लगी, तब मुझे लगा, जैसे चेतना के रूप में मैं पन्द्रह बरस पहले की वह घड़ी फिर से जी रही हूं।''

वह गीत इस प्रकार है-''अम्बर की एक पाक सुराही, बादल का एक जाम उठाकर घूंट चांदनी पी है हमने, बात कुफ्र की, की है हमने। कैसे इसका कर्ज चुकाएं, मांग के अपनी मौत के हाथों, यह जो जिन्दगी ली है हमने, बात कुफ्र की, की है हमने। अपना इसमें कुछ भी नहीं है, राजे अज़ल उसकी अमानत। उसको वही तो दी है हमने, बात कुफ्र की की है हमने।'' (पृ० 96)

अपनी आत्मकथा 'रसीदी टिकट' में अमृता प्रीतम मानवीय जीवन को एक किताब का रूप देकर उसमें बचपन से लेकर बुढ़ापे तक घटित घटनाओं का प्रतिबिम्बित लेखा-जोखा यों अभिव्यक्त करती हैं-

जिन्दगी जाने कैसी किताब है,
जिसकी इबारत अक्षर-अक्षर बनती है,
और अक्षर-अक्षर टूटती,
बिखरती और बदलती है.....,
और चेतना की एक लम्बी यात्रा के
बाद एक मुकाम आता है, जब
अपनी जिन्दगी के बीते हुए काल का,
उस काल के हर हादसे का,
उसकी हर सुबह की निराशा का,
उसकी हर दोपहर की बेचैनी का,
उसकी हर सन्ध्या की उदासीनता का,
और उसकी जागती रातों का
एक वह जायज़ा लेने का सामर्थ्य पैदा
होता है जिसकी तशरीह में
नये अर्थों का जलाल होता है, और
जिसके साथ हर हादसा एक वह
कड़ी बनकर सामने आता है, जिस
पर किसी 'मैं' ने पैर रखकर
मैं के पार जाना होता है।

स्पष्ट है कि कवयित्री ने जीवन की सच्चाई को अपने जिस दार्शनिक परिप्रेक्ष्य में

व्याख्यायित किया है उसे कोई गम्भीर आध्यात्मिक सिद्धांतों का अध्येता ही समझ सकता है।

अपने कविता संग्रह- ''कागज ते कैनबैस'' में संग्रहीत अमृता की 'गर्भवती' कविता में भी दार्शनिक भावों की ही अभिव्यंजना है:-

ध्यातव्य हैं ये पंक्तियां-

''फागुन की कटोरी में सात रंग घोलूं
मुंह से बोलूं
यह मिट्टी की सार्थक होती है
जब पसलियों के बीच कोई नीड़ बनाता है।
यह कैसा यज्ञ? यह कैसा तप?
कि माताओं को रब्ब दीदार.... कोख में से होता[7].....''

क्योंकि कवयित्री बचपन से ही कई संकटापन्न परिस्थितियों तथा अभावों की पीड़ाओं को अपने भीतर सिगरेट के धूएं के समान उमर भर पीती रही थी जिनमें से कुछ उसका भोगा हुआ यथार्थ बन कर उसकी संवेदनात्मक भावभूमि में उथल पुथल मचाकर कुछ उसकी कलम से उद्‌भव होकर ऐसे ही कोरे कागजों पर गिर कर अंकित हुई जैसे जले हुए सिगरेट की राख झड़ती है:-

द्रष्टव्य है ये पंक्तियां-
अमृता प्रीतम
एक दर्द था
जो सिग़रेट की तरह मैंने चुप-चाप पिया है।
सिर्फ कुछ कविताएं
जो सिगरेट से मैंने राख की तरह झाड़ी है।[8]

पंजाब के युवक जिस प्रकार भूखे-प्यासे रहकर तथा अनेक यातनाएं दिये जाने पर भी अपने धर्म और मां धरती की रक्षा के लिए आत्म बलिदान के लिए सदा तैयार रहते हैं। उसका उपनाम वे स्वयं हैं।

इस विषय में ये पंक्तियां द्रष्टव्य हैं-

''पुत्तर इस जमीन के भूखे-भोले ढोर,
जिधर भेजें मदारी चले जाएं उस ओर।
किसी मदारी हाथ का पानी जब वे पी लें,
कभी सिरों को चीरते, चीरें कभी जमीन।
कभी रब्ब के नाम पर देते जीभ चढ़ा।
कभी मजहब के नाम पर लेते सिरों को उतार,

कभी सब्र के नाम पर बोलें न एक भी बोल।
कभी शुक्र के नाम पर उम्र ही देते घोल।''

अमृता के रूपक प्रतीकों के संयोग से जब कविता में उतरते हैं तो पाठकों को किसी असीम आनन्द के लोक में पहुंचा देते हैं, जिसकी उन्होंने पहले कभी कल्पना तक न की होती है–

शीशे की सुराही में मैंने नज़रों की शराब भरी है।
और हम दोनों जाम पी रहे हैं।
वह टोस्ट दे रहा है उन शब्दों के
जो सिर्फ छाती में उगते हैं
यह अर्थों का जशन है....
मैं हूं वह है और शीशे की सुराही में नज़रों की शराब है।[9]

नारी जाति पर पुरुषों द्वारा किए जा रहे अत्याचारों से अमृता को भारी आक्रोश है, इसलिए वह पुरुष वर्ग पर अपनी व्यंग्यात्मक भाषा में अन्नदाता कविता में अपना आक्रोश यों अभिव्यक्त करती हैं :–

''अन्न दाता, मैं चमड़े की गुड़िया खेल ले, खिला लो।
लहू का प्याला पी ले, पिला ले।
तेरे पास खड़ी है यह उपभोग की शै।
जैसे चाहो उपयोग कर लो।''

कवयित्री के 'सुनेहड़े' कविता संग्रह (पहला) में 1940 ई० से 1948 ई० के मध्य रची कविताएं संग्रहीत हैं। 'सुनेहड़े' (संदेश) कविता में वह सम्बोधन तो अपने प्रेमी को करती हुई प्रणय निवेदन करती हुई प्रतीत होती हैं, परन्तु उसके माध्यम से वह लेखक वर्ग को यह सन्देश देती है कि अपनी पुरानी कलमों को बदल कर नई पकड़ो और पुरानी स्याही को भी बदल डालो और फिर कोरे कागजों पर इस धरती की ऐसी सच्चाई की मोहर लगा दो जिससे समाज में फैली हुई हिंसा, साम्प्रदायिकता और घृणा सदा के लिए समाप्त हो जाए :–

''केवल एक संदेशा मैं दूं तुझ को,
कलम वाले बी कलमें बना जाकर।
या फिर कलम ही उसकी बदल देना,
स्याही बदलना स्याही नई देकर
रखना कोरे, न कोरे कागज़ों को,
उन पर धरती के सच की मोहर लगा कर।
अक्षर उसके हाथ में देना ऐसे,
बदल डाले वह सारे फरमान आकर।''

उनकी एक और रचना जिसमें देश के बंटवारे के समय जो भयंकर अत्याचार भारत के पश्चिमी भाग (जो अब पाकिस्तान का भाग है) के हिन्दुओं पर और वे भी नारी जाति के साथ हुए उनका चित्रण है। यद्यपि उनकी 'वारिस शाह' कविता में भी वही त्रासदी चित्रित हुई, परन्तु इस नीचे उद्धृत कविता में उसे और हृदयस्पर्शी चित्रित किया गया है–

कहां है मेरी अंबड़ी मुझे जिसने जाया (जन्म) था?
न चप्पू न किश्तियां कैसे पार करूं चनाब?
कहां गई मेरी गुड्डियां कहां गए पटोले[1] साथ?
कहां मेंहदी रांगली सालू[2] मेरा लाल
किसी ने न गुथी मीढ़ियां[3] न किसी ने गूंथे फूल।
किसी ने न डाला चौंक[4] वे जुल्फें गई मेरी खुल,
किसी ने न डोली में बैठाया किसी न गाए सोहाग।[5]
किसी ने न गाई घोड़ियां[6] किसी ने न मांगा नेग।[7]
किसी रब्ब के रू-ब-रू किया न इंकार।
किसी ने पानी न चखा मेरे सिर से बार
किसी ने न खोली पत्तरी, न किया किसी ने कन्यादान।
सारे बजारों में बिकी ऊंचे घर की लाज,
कहां हैं रानी मां मेरी कहां है राजा बाप?
हरी चंद की नार को किसने दिया सराप,
कहां मां की जाई वे कहां बहन के बीर?
लहू-मांस की सांझ को किसने दिया चीर?
कहां संग-सहेलियां कहां नगर गांव?
क्या-क्या मुझ पर बीत गई किसको कहने जाऊं?
कहां है जन्मदाता मेरे। कहां सजन के सैन (संकेत)?
मैं तत्ती बेटी पंजाब की राए तत्ती के नैंन।[10]

क्योंकि इमरोज के प्रति अमृता प्रीतम का निश्छल और कुछ विशेष अलौकिक जैसा प्यार भाव था, इसीलिए इमरोज ने कवयित्री का अंतिमश्वास तक समर्पित भाव से साथ ही नहीं दिया अपितु उसकी रुग्णावस्था में भी पूरी सहृदयता से सेवा की थी। उससे भाव विभोर होकर अमृता ने उसके प्रति अपनी कृतज्ञ भावना इन पंक्तियों में बड़ी सूक्ष्म भाव प्रवणता के साथ अभिव्यक्त की हैं–

"–मैं तुम्हें फिर मिलूंगी,
कहां? किस तरह? पता नहीं।

शायद तुम्हारी कल्पनाओं का चित्र बनकर,
तुम्हारे कैनवस पर उतरूंगी?
या फिर तुम्हारे कैनवस के ऊपर
एक रहस्यमयी लकीर बनकर
खामोश तुम्हें ताकती रहूंगी।
मैं तुम्हें फिर मिलूंगी।''

अपनी आत्मकथा रसीदी टिकट में लेखिका ने अपनी इच्छा (वसीयत) इस प्रकार अभिव्यक्त की है-

''मरी हुई मिट्टी के पास किसी जमाने में लोग पानी के घड़े या सोने-चांदी की वस्तुएं रखा करते थे। ऐसी किसी चीज़ में मेरी कोई आस्था नहीं है, पर हर चीज़ के पीछे आस्था का होना आवश्यक नहीं होता। चाहती हूं इमरोज मेरी मिट्टी के पास मेरा कलम रख दे।''

अमृता की कविताओं में काव्यात्मक बिम्बों और प्रतीकों की जो सुनहरी छटा देखने को मिलती है, वह अपना उपमान स्वयं है। नीचे उद्धृत पंक्तियां हमारे मन्तव्य की साक्षी हैं-

-''अम्बर एक आशिक, निढाल सा बैठा धुन्ध का हुक्का पी रहा,
और सूरज के कोयले से रेखाएं खींचता, किसी की राह देख रहा।
आज पूरब की खड़िया खाली है, सुबह बैठने को नहीं आई,
बावरा अंबर उसे धरती की खाई में है खोज रहा।
और फिर।''

इस पद्यांश में उपमा का सौन्दर्य भी देखने योग्य है। (रसीदी टिकट पृ० 104)

उपर्युक्त सर्वेक्षण से बहुमुखी प्रतिभा की स्वामिनी अमृता प्रीतम के विशाल साहित्य की केवल झलक ही मिलती है, यद्यपि उनकी कविताओं के कुछ अंश इस आलेख में उद्धृत करके उनकी काव्यात्मक भाव प्रवणता का जो परिचय दिया गया है उस से उनकी कवि प्रतिभा तो किसी सीमा तक मुखरित होती हुई सामने आ ही जाती है।

अन्त में डॉ० कीर्ति केसर के आलेख की अन्तिम पंक्तियां साभार उद्धृत करने के साथ ही हम भी इस आलेख की सम्पन्नता की ओर बढ़ते हैं-

''अमृता की कविता सदा कविता ही मानी जाएगी, किन्तु उसकी अपनी ज़मीन की कविता ही, चनाब की धारा से जुड़ी कविता ही उसे अक्षुण्ण अमृत की धारा बनाए रखेगी।

पंजाबी कविता अपनी इस लाड़ली बेटी की सदा ऋणी रहेगी। वह इधर पलटकर देखें या न देखें मगर यह उसकी तरफ देखती रहेगी।'' (शीराजा हिन्दी, अप्रैल-मई 2004 जे. एण्ड. के अकैडमी ऑफ आर्ट कल्चर एण्ड लैंग्वेजिज़ जम्मू पृ० 47)

पाद टिप्पणियां :-

1. शीराजा (हिन्दी अप्रैल-मई 2004 अंक) जम्मू-कश्मीर कला संस्कृति और भाषा अकेडमी, जम्मू पृ० 33

2. 'हिन्दुस्तानी जबान (अप्रैल-जून 2007 अंक) में महात्मा गांधी मेमोरियल सेन्टर, मुंबई द्वारा प्रकाशित डॉ० अमर सिंह बधान के लेख अमृता प्रीतम की काव्य चेतना से साभार पुनरूद्धृत पृ० 24

3. वही जनवरी-मार्च 2009 अंक पृ० 7

4. रसीदी टिकट पृ० 110

5. हिन्दुस्तानी ज़वान (मुंबई) जनवरी-मार्च 2009 (अंक) में प्रकाशित डॉ० खेम सिंह डहेरिया के लेख- ''अक्षर से अर्थ तक यात्रा'' से साभार पुनरूद्धृत पृ० 8

6. वही पृ० 8-9

7. कागज के कैनवैस पृ० 33

8. '' वही पृ० 90

9. '' वही पृ० 43

10. छे रूत्तां चोणवी कवितां पृ० 51

OOO